REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 8 | ISSUE - 3 | DECEMBER - 2018

जयप्रकाश नारायण की राजनीतिक विचारधारा : एक अध्ययन

डॉ०नरेन्द्र कुमार
सहायक प्राध्यापक (इतिहास) एन० आई० आई० एल० एम० विश्वविद्यालय कैथल, हरियाणा.

प्रस्तावना :

जयप्रकाश नारायण ने पूरा जीवन राष्ट्र की सेवा में अर्पित कर दिया। उन पर महान् व्यक्तियों के विचारों का काफी प्रभाव था, जैसे: कार्ल मार्क्स, लेनिन, महात्मा गांधी आदि। उनका शुरू में झुकाव मार्क्स के विचारों से प्रभावित होते हुए समाजवाद की तरफ रहा था। वे चाहते थे कि ऐसा समाज हो जिसमें शोषण न हो, सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाये। किसी के साथ अन्याय न होने पाये। उनका विश्वास समाजवाद में धीरे-धीरे कम होता गया और गांधी के सर्वोदय के प्रति अधिक हो गया।[1] जयप्रकाश नारायण के विचार भी समय के साथ-साथ बदलते रहे थे, परन्तु उनका ऐसा प्रयास रहा कि समाज में शोषण, भुखमरी, गरीबी, भ्रष्टाचार तथा अन्याय का अन्त हो और समानता, बन्धुत्व कायम हो। उसके लिए वे हमेशा अहिंसा पर जोर देते हुए देश की राजनीतिक परिस्थितियां को बदलने का प्रयास करते रहे। उनके राजनीतिक विचारों में सत्य, सहनशीलता, तटस्थता तथा तर्क शक्ति की विद्यमानता रहती थी।[2]

जयप्रकाश नारायण का लोकतन्त्र में पूर्ण विश्वास था। उनका मानना था कि इसमें प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी होनी चाहिए, ताकि मजबूत लोकतन्त्र का निर्माण किया जा सके। उन्होंने लोकतन्त्र के लिये सत्य, अहिंसा, स्वतन्त्रता पर जोर दिया तथा अत्याचार के विरुद्ध प्रतिकार किया। शक्ति, सहयोग, परमार्थ, सहनशीलता, उत्तरदायित्व की भावना, मानव समानता में निष्ठा एवं मानवीय प्रकृति 'शिक्षणीयता में विश्वास आदि गुणों तथा मानसिक दृष्टिकोणों को लोकतन्त्र के लिये आवश्यक बताया। लोकतन्त्र की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि व्यक्ति राज्य पर कम से कम निर्भर रहे।[3] उनके अनुसार, राजनीति का उद्देश्य केवल शक्ति प्राप्त करना नहीं होना चाहिए, क्योंकि शक्ति ही राजनीति का सार बन जाये तो भले-बुरे अर्थात् सभी प्रकार के साधनों का प्रयोग खुलकर किया जायेगा और राजनीति भ्रष्टाचार की पर्यायवाची बन जाएगी, ऐसे

1. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व-सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ० 30.
2. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ० 171.
3. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार-यात्रा, भाग-1, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन वाराणसी, 2010, पृ० 145.

वातावरण में कोई भी दल समाप्त हो सकता है। उनका मानना था कि राजनीति को शक्ति का नहीं, जन-सेवा का साधक बनना चाहिए।[4]

जयप्रकाश नारायण समाजवाद में विश्वास करते थे। उन्होंने अमेरिका में रहकर बहुत गहराई और तत्परता से मार्क्सवादी साहित्य अध्ययन किया था। वे मार्क्स, एंजिल्स के साथ-साथ लेनिन से भी प्रभावित थे, कोमिटर्न ने माना कि भारत में कांग्रेस एक प्रतिक्रियावादी संस्था है और गांधीजी बुर्जवा लीडर है। भारत में राष्ट्रवादियों के मन में साम्यवादी की इस व्याख्या की तीव्र प्रतिक्रिया हुई।[5] उस काल के प्राय: अधिकांशत: पढ़े-लिखे भारतीय नवयुवक उस काल के प्रखर वामपंथी भारतीय चिन्तक एम० एन० राय के प्रारम्भिक विचारों से प्रभावित थे। उनके विचार बहुत अधिक क्रान्तिकारी थे, जो नौजवानों की अकुशल मनोवृत्तियों और रूचि के सर्वथा अनुकूल पड़ते थे। जयप्रकाश नारायण का धीरे-धीरे समाजवाद से गांधीवाद की तरफ झुकाव हो गया था। इसका कारण यह था कि उन्होंने राष्ट्रवादियों के साथ काम करना शुरू कर दिया था।[6] जब लाहौर अधिवेशन (1929 ई०) में वह प० जवाहरलाल नेहरू एवं मदन मोहन मालवीय जैसे नेताओं से मिले तो राष्ट्रीय स्वतन्त्रता में शामिल होने की ज्यादा उत्सुकता दिखाई, जिस कारण वह गांधीजी के प्रति ज्यादा प्रभावित हुए। असहयोग आन्दोलन और सविनय अवज्ञा आन्दोलन की असफलता के कारण उन्हे निराशा हुई। उन्हे सितम्बर 1932 ई० में मद्रास से गिरफ्तार कर 1933 ई० के अन्त में रिहा किया।[7] 17 मई 1934 ई० के दिन पटना में समाजवादी विचारों में आस्था रखने वाले मित्रों की एक तदर्थ परिषद् आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में हुई तथा अक्तूबर 1934 ई० में सम्पूर्णानन्द की अध्यक्षता में एक बड़ा सम्मेलन हुआ। इस सम्मेलन में कांग्रेस समाजवादी पार्टी की विधिवत् स्थापना हुई। आचार्य नरेन्द्र देव अध्यक्ष तथा जयप्रकाश को संगठन मंत्री की जिम्मेदारी सौंपी गई। उन्होंने जिम्मेदारी संभालते ही पूरे देश में समाजवादी विचारों का प्रचार करना शुरू कर दिया है।[8] जयप्रकाश नारायण कांग्रेस की ब्रिटिश साम्राज्यशाही से समझौते की नीति के विरुद्ध थे। उन्होंने कांग्रेस की कार्यशैली के खिलाफ अपना विरोध प्रकट किया। उनका मानना था कि राष्ट्रीय एकता ऊपर से थोपी नहीं जा सकती बल्कि राष्ट्रीय एकता का भाव नीचे से आना चाहिए जो संघर्ष से उत्पन्न हो सकता है। उन्होंने कैबिनेट मिशन योजना तथा लॉर्ड मांऊटबेटन योजना का विरोध किया। 14-15 जून को लॉर्ड मांऊटबेटन योजना की स्वीकृति हेतु कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक हुई, जिसमें जयप्रकाश नारायण और पं० जवाहर लाल नेहरू तथा पटेल में तीव्र विवाद हुआ, लेकिन गांधी इस वक्त विवाद नहीं चाहते थे। उन्होंने एकता पर बल दिया। फलस्वरूप समाजवादियों ने लॉर्ड मांऊटबेटन योजना पर मतदान में भाग नहीं लिया, दूसरी ओर कांग्रेस समझौतावादी नीति अपना रही थी। इधर अंग्रेजों ने मुस्लिम लीग से मिलकर देश में ऐसी साम्प्रदायिकता फैला दी कि

---

4. सतीश चतुर्वेदी, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, व्यक्ति और विचार, आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर, 2003, पृ० 131.
5. लक्ष्मी नारायण लाल, जयप्रकाश नारायण, मैकमिलन कम्पनी, दिल्ली 1955, पृ० 61-62.
6. सुधाकर लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय आन्दोलन और जयप्रकाश नारायण, राधा पब्लिकेशन्स, अन्सारी रोड़ दरियागंज, नई दिल्ली, 1991, पृ० 17.
7. ऐलन एण्ड वैण्डी स्कार्फ, जयप्रकाश : एक जीवनी, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, 1978, पृ० 75-77.
8. नारायण ऐसाई (सं०) कान्ति शाह, जयप्रकाश (स्मृति ग्रन्थ), अनुवादक, काशीनाथ त्रिवेदी, जयप्रकाश अमृतकोष, 223 उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली, 1982, पृ० 329.

देश का सारा जन-जीवन खून की होली खेलने लगा। एक ओर गांधी, लोहिया तथा जयप्रकाश नारायण देश में शान्ति स्थापना में लगे थे। दूसरी ओर अंग्रेजी सरकार ने मांऊटबेटन द्वारा देश विभाज्य का प्रस्ताव भेजकर स्वीकृत भी करवा दिया और अन्त में भारत तथा पाकिस्तान दो स्वतन्त्र देशों का उदय हुआ।[9]

जयप्रकाश नारायण स्वतन्त्रता के बाद राजसत्ता से दूर ही रहे। उनका प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू से मतभेद हो गया था। उनका मानना था कि कांग्रेस सरकार जैसा काम कर रही है, उससे ऐसा नहीं लगता कि कोई बदलाव होगा, क्योंकि कांग्रेस पार्टी में न तो इच्छाशक्ति है और न ही क्षमता है। 1952 ई० के चुनाव में हार के कारण ही किसान-मजदूर प्रजा पार्टी तथा सोशलिस्ट पार्टी का विलय होकर प्रजा सोशलिस्ट पार्टी का निर्माण किया।[10] इस समय तक जयप्रकाश नारायण भारतीय राजनीति में आरोप-प्रत्यारोप की राजनीति से ऊब चुके थे। उन्होंने विनोबा भावे के साथ मिलकर सर्वोदय आन्दोलन को आगे बढ़ाने का कार्य किया।[11] जयप्रकाश नारायण सत्ता के विकेन्द्रीयकरण पर बल देते थे। उनका मत था कि सता के केन्द्रित हो जाने में बड़ा खतरा है, इसलिए हमारा ध्यान अब तक उपेक्षित रही स्थानीय स्वायतशासी संस्थाओं की ओर जाना चाहिए। ग्राम प्रखण्ड और जिला-स्तर की ये स्थानीय स्वायतशासी संस्थाएँ ही हमारे लोकतन्त्र की बुनियाद को मजबूत बना सकेगी। सत्ता हथियाने, तानाशाही लादने की वृत्ति के विरुद्ध ऐसी विकेन्द्रित व्यवस्था ही ढाल बन सकती है, इसलिए वे सत्ता के विकेन्द्रीयकरण पर जोर देते थे।[12]

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि निचले स्तर पर लोगों को अधिकतम सता मिलनी चाहिए। उन्होंने 'ग्राम-राज्य' की एक नवीन कल्पना का चित्रण किया। उनके अनुसार, 'ग्राम-राज्य' में स्वयं एक खुद सरकार होगी। वह सिर्फ पंचायत नहीं बल्कि एक प्रजातन्त्र का आदर्श रूप होगी। इस प्रकार के ग्राम-राज्य की रचना ग्रामीणों को ही स्वयं अपनी शक्ति से करनी होगी, न की सरकारी एजेन्सियों द्वारा। ये भारतीय प्रजातन्त्र के निर्माण में ईंट का कार्य करेगी।[13] ग्राम राज्य की व्यवस्था के विकास हेतु उन्होंने कुछ कार्यों की चर्चा की है, जिनमें निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण हैं:

(1) सदस्यों की भर्ती करना, प्रत्येक ग्रामीण को बालिग होने पर समितियों के सदस्य बनाने की कोशिश करना।

(2) ऐसे सांस्कृतिक केन्द्र खोले जाने चाहिये, जहां पर समाचार-पत्र इत्यादि तो पढ़े जायें ही, इसके अलावा भी उनके द्वारा अन्य प्रकार के सांस्कृतिक कार्य भी किये जायें।

(3) अस्पृश्यता निवारण।

(4) शराबबन्दी।

(5) सामुदायिक मेल-मिलाप बढ़ाने की कोशिश करना।

---

9. सुधाकर लाल श्रीवास्तव, पूर्व उद्धृत पृ० 109
10. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद सर्वोदय और लोकतन्त्र (भूमिका), बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ० 13
11. सुनीलम प्रसाद, विनोद (संपादक) : समाजवादी आन्दोलन तनाव का दौर दस्तावेज (1952-54) प्रतिपक्ष प्रकाशन दिल्ली, 1986, पृ० 91-92
12. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व-सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ० 131
13. जयप्रकाश नारायण, ग्रामदान और देश की समस्याएं, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 1965, पृ० 27.

(6) जनता की शिकायतों का निवारण।

(7) साम्प्रदायिक सद्भाव की स्थापना।

(8) सहकारी बाजार-व्यवस्था।[14]

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि ग्राम पंचायतों को भूमि और किसानों को आपसी मामलों को सुलझाने का अधिकार मिलना चाहिए। इसलिए उन्होंने 'सहकारी खेती' व 'सामूहिक कृषि' का समर्थन किया।[15] उन्होंने पंचायती राज्य की योजना विकास कार्यों में जन-सहयोग प्रेरित करने की युक्ति के रूप में स्वीकार की है। उन्होंने इस योजना में अपने वांछित रूप में एक क्रांतिकारी विचार की स्वीकृति, मौजूद देखी। अतः उन्होंने हृदय से 'पंचायती राज' की योजना का समर्थन किया, परन्तु उसी क्रम में उन्होंने नेहरू के पंचायती राज की परिकल्पना करते हुए कहा कि, "उनका पंचायती राज लोकतन्त्र के दो भिन्न सिद्धान्तों एवं प्रक्रिया का अनमोल मिश्रण था, जो व्यवहार में असम्भव था। उनकी कल्पना यह थी कि सामुदायिक समाज, सामुदायिक लोकतन्त्र, सामुदायिक राज्यव्यवस्था के निर्माण के लिए बुनियादी शर्त यह थी कि गाँव एक समुदाय बने।" जब गाँव के सभी हितों में समानता होगी तभी यह योजना सफल होगी।[16] वे संसदात्मक व्यवस्था के समर्थक थे परन्तु उन्होंने संसदीय शासक प्रणाली में कुछ कमियाँ पाई तथा उनको दूर करने का संकेत दिया। उनकी विशेष आपत्ति राजनीतिक दलीय प्रणाली तथा चुनाव व्यवस्था से थी। आज प्रशासन में जो भ्रष्टाचार व्याप्त है तथा राष्ट्रीय हितों की बलि चढ़ाई जा रही है। ये सब कार्य राजनीतिक दलों के हैं। राजनीतिक दल चुनाव जीतने के बाद सार्वजनिक हित के स्थान पर अपने स्वार्थ सिद्ध करते हैं।[17] उनके अनुसार, इन्हीं दलों के कारण व्यक्ति की स्वतन्त्रता नष्ट हो रही है। उन्होंने उनकी आलोचना करते हुए कहा कि "48:40 मत पाने वाले सता में आ जाते हैं और 60 प्रतिशत मत व्यर्थ चले जाते हैं।"[18] इस अपूर्णता के कारण ही उन्होंने दलविहीन लोकतन्त्र की बात की। उनके अनुसार, वर्तमान चुनाव-प्रणाली को समाप्त कर इसके स्थान पर ग्राम सभा से लेकर सर्वोच्च स्तर तक उम्मीदारों का जनता द्वारा प्रत्यक्ष मनोयन होना चाहिए।[19] जयप्रकाश नारायण ने दलों और मतदान प्रणाली में सुधारों की व्याख्या भी की, ये निम्नलिखित हैं:

1. मतदान की उम्र 18 वर्ष होनी चाहिए।
2. निर्वाचन तिथियों की घोषणा के बाद शासन द्वारा जनता को लुभाने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण नीतियों की घोषणा नहीं करनी चाहिये, न उद्योगों की स्वीकृति देनी चाहिये और न ऐसे उद्योगों या प्रतिष्ठानों के शिलान्यास ही करने चाहिये।
3. निर्वाचन आयोग के सदस्यों की संख्या बढ़ाई जानी चाहिये।
4. निर्वाचन व्यय का विवरण राजनैतिक दलों को अनिवार्य रखना चाहिये।

---

14. जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य (विस्तृत अध्ययन), सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004.
15. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ॰ 44.
16. जयप्रकाश नारायण, सामुदायिक समाज रूप और चिन्तन, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ॰ 50-51.
17. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की और, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ॰ 42.
18. जयप्रकाश नारायण, टाटेल रिवोल्युसन, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ॰ 49.
19. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ॰ 35.

5. सदस्यों द्वारा दाखिल व्यय विवरण में दलों या किसी दल द्वारा किये जाने वाले व्यय को भी शामिल किया जाना चाहिये।
6. संविधान में इस बात की व्यवस्था हो कि चुने सदस्यों को वापिस बुलाया जा सके।
7. शासकीय दल द्वारा शासकीय साधनों–रेडियो, टेलिविजन, हवाई जहाज का दलीय कार्यों के लिये प्रयोग वर्जित होना चाहिये।
8. मतदान से एक सप्ताह पूर्व शराबबन्दी लागू की जानी चाहिये।
9. मतदान के दिन निजी कारों सहित तमाम सवारी गाड़ियों के चलने पर प्रतिबन्ध होना चाहिये।[20]

जयप्रकाश नारायण का विचार था कि, भारत में लोकतान्त्रिक समाजवाद के स्थापना के लिए लोकतान्त्रिक पद्धति को अपनाया जा सकता है और उनके दिमाग में वह लोकतन्त्र था, जिसका आधार नागरिक–शक्ति थी।[21] उन्होंने सहभागी लोकतन्त्र के लिए सुझाव देते हुए कहा था कि जहां तक सम्भव हो उसकी पद्धति में कम से कम विभाजन होना चाहिये। "मेरा आग्रह है कि विविध शिक्षणात्मक और वैधानिक उपायों का निर्वाचन परिषदों के एक स्थान के लिए एक से ज्यादा खड़े करने के लिए प्रोत्सोहित ना किया जाये।"[22] उनका मानना था कि सत्ता का हस्तान्तरण वास्तविक होना चाहिए, दिखावटी नहीं। अगर इसमें सभी लोगों की भागीदारी होगी तो लोकतन्त्र की नींव मजबूत होगी।[23] लोकतन्त्र का मतलब केवल राजनीतिक अधिकार और शासन में जन–सहयोग नहीं है। लोकतन्त्र से अभिप्राय अधिकाधिक सामाजिक न्याय, अवसर की समानता और औद्योगिक लोकव्यवस्था से है। लोकतन्त्रात्मक प्रणाली में सभी का सहयोग जरूरी है ताकि वे मिल–जुल कर अपनी समस्याओं का समाधान करें।[24] उनका मानना था कि सता के केन्द्रीयकरण से लोकतन्त्र का पतन होता है। उन्होंने वैचारिक मान्यताओं के विपरीत हर सरकार के द्वारा केन्द्रीयकरण और बड़ी मात्रा में उत्पादन को महत्त्व दिया जाता है। यह युद्ध की दृष्टि से आवश्यक है और आर्थिक शक्ति तथा राजनैतिक शक्ति को उनके हाथों में केन्द्रित कर देती है। उनका मत था कि जात–पात और छूआछूत जैसी सामाजिक प्रणालियां एवं मानसिक प्रवृत्तियाँ, जो समाज में मौजूद है जो लोकतन्त्र के मार्ग की सबसे बड़ी बाधाएं हैं।[25] जिस समाज में मनुष्य जातिगत आधार पर ऊँच–नीच और अछूत समझे जाते हों, उसमें लोकतन्त्र नहीं चल सकता। लोकतन्त्र के प्रति आस्था रखने वाले प्रत्येक भारतीय नागरिक को यह समझ लेना चाहिये कि इस देश में लोकतन्त्र के सबसे बड़े शत्रु जातिवाद और अस्पृश्यता ही है। उनका मानना था कि लोकतन्त्र के इन शत्रुओं को राजनीति के हथियारों से नहीं बल्कि जन–संघर्ष से ही समाप्त किया जा सकता है।[26] उनका मानना था कि वर्तमान भारतीय लोकतन्त्र का विकास ब्रिटिश शासन की देन है। उन्होंने प्रचलित लोकतन्त्र की अपेक्षा सहभागी लोकतन्त्र द्वारा दोषों

---

20. अंजनी कुमार जमदग्नि, जयप्रकाश नारायण, राजनैतिक और सामाजिक विचार, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स, जयपुर, 1987, पृ॰ 101.
21. आचार्य राममूर्ति, जे॰ पी॰ की विरासत, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ॰ 115.
22. ओम प्रकाश शर्मा, सर्वोदय और यजप्रकाश नारायण, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 19921, पृ॰ 80.
23. जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2004, पृ॰ 18.
24. जयप्रकाश नारायण, भारतीय राज्य–व्यवस्था की पुर्नरचना एक सुझाव, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ॰ 17.
25. अंजनी कुमार जमदग्नि, जयप्रकाश नारायण, राजनैतिक और सामाजिक विचार, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स, जयपुर, 1987, पृ॰ 101.
26. जयप्रकाश नारायण, भारतीय राज्य व्यवस्था की पुनर्जरचना : एक सुझाव, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ॰ 20.

के परिमार्जन करने पर बल दिया है। जयप्रकाश राजनीतिक एवं आर्थिक केन्द्रीयकरण को लोकतन्त्र का शत्रु मानते थे। वे विकेन्द्रियकरण के प्रबल समर्थक थे।[27] उनके अनुसार, सता के विकेन्द्रीकरण में नीचे के स्तर में काम करने वाले समुदाय और सामुदायिक प्रतिनिधि संस्थाए निर्णायक प्रभाव डालती हैं। निर्वाचन करने वाली संस्थाएं अपने द्वारा ऊपर भेजे गए प्रतिनिधियों पर लगातार नियन्त्रण रखती है। इसमें ग्राम सभा द्वारा पूरी जनता का सहयोग रहता है। इसमें हर व्यक्तियों को समस्याओं के बारे में पता होता है और सभी मिलकर इन समस्याओं को हल करने का प्रयत्न करते हैं तथा इससे ही लोक-स्वराज्य की स्थापना पड़ती है।[28] उनका मत था कि स्वराज्य का निर्माण नीचे से ही हो सकता है, न की ऊपर से। उनका मानना था कि "स्वराज्य एक पवित्र शब्द है, यह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ है आत्म-शासन और आत्म संयम है।" उनके अनुसार, किसी भी देश में सही मायने में लोकतन्त्र को कायम करना ही स्वराज्य है। स्वराज्य से ही देश का विकास संभव है।[29] उनके अनुसार, समाजवाद के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पूँजीवादी व्यवस्था का उन्मूलन करना तथा दलीय तानाशाही की स्थापना ही समाजवाद नहीं है बल्कि उसका उद्देश्य स्वतन्त्रता एवं समानता पर आधारित मानवीय एवं सामाजिक मूल्यों से युक्त एक शोषण विहीन समाज की स्थापना करना है।[30]

जयप्रकाश नारायण ने संसदीय प्रजातन्त्र में दलीय व्यवस्था की भी आलोचना की है। उनके अनुसार, 'दलीय पद्धति' ने आम जनता को भेड़ बना दिया। जिसका उद्देश्य गडेरिये का समय-समय पर चयन करना है जो उनके कल्याण की देखभाल करेंगे। अत: वे केन्द्रिय दलीय सरकार को समाप्त करने में विश्वास करते हैं।[31] उन्होंने सामुदायिक प्रजातन्त्र का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। उसमें छिट-पुट रूप से दलें पाई भी गई तो उनका राज्य में महत्त्व नहीं के बराबर रहेगा। साथ ही राजनीतिक दल अपने शारीरिक प्रभाव, धन, भ्रष्टाचार और धोखाधड़ी से जनतान्त्रिक चुनाव के अर्थ और महत्त्व को भी समाप्त कर रहे हैं। अत: जयप्रकाश नारायण वर्तमान प्रजातन्त्र को अपूर्ण मानते थे।[32] उनकी सामुदायिक प्रजतान्त्र की अवधारणा सामुदायिक समाज के विचारों पर आधारित है। इस व्यवस्था में वे राजनीतिक विकेन्द्रीयकरण के महत्त्व पर बल देते हुए सर्वोदय की ओर जाने पर बल देते हैं। जिसमें व्यक्ति और समुदाय के बीच सम्बन्ध ऐसा होगा कि व्यक्ति, समुदाय के लिए और समुदाय, व्यक्ति के लिए मर-मिटने को तैयार रहेगा। जिस अंश तक यह मनोभावना दोनों और विकसित होगी, उसी अंश तक व्यक्ति और समाज का विकास होगा।[33]

LBP PUBLICATION

27. ओम प्रकाश शर्मा, पूर्व उद्धृत, पृ० 81.
28. जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004, पृ० 36.
29. यशवन्त सिन्हा (सम्पादक), स्वराज से लोकनायक, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ० 117.
30. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र (भूमिका), बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ० 13.
31. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ० 63.
32. सुधाकर लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय आन्दोलन और जयप्रकाश, पूर्व उद्धृत, पृ० 169.
33. जयप्रकाश नारायण, सामुदायिक समाज रूप और चिन्तन, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ० 102.

इस प्रजातन्त्र की अवधारणा में शक्तियाँ नीचे से ऊपर की ओर संचालित होगी न कि ऊपर से नीचे की ओर। निम्न इकाई स्वावलम्बी होगी और केन्द्र का सहयोग आवश्यकता पड़ने पर ही लेगी।[34]

जयप्रकाश नारायण का मानना था कि जब तक हम जन-संघर्ष नहीं करेंगे तो ऐसे प्रजातन्त्र की स्थापना नहीं हो सकती। उनका मत था कि सामूहिक हितों की रक्षा सामूहिक चेतना से ही की जा सकती है। सामूहिक चेतना को जागृत करने के लिए वे अहिंसक एवं शान्तिपूर्ण आन्दोलन को आवश्यक मानते थे।[35] जब गुजरात में भयंकर सूखे और फसलों के मर जाने के कारण 1973 ई० में खाद्यान्नों और खाद्य तेलों की कीमतों में 100 प्रतिशत तक वृद्धि हो गई। इस मूल्य वृद्धि के लिए व्यापारियों, कालाबाजारियों और सत्ताधारी राजनीतिज्ञों के गठबन्धन को दोषी माना गया और एक भयंकर हिंसक छात्र आन्दोलन की शुरूआत हुई।[36] गुजरात में जब आन्दोलन अपने चरम पर था तो उसकी सफलता से प्रेरित होकर समान नीतियों और उद्देश्यों को लेकर 1974 ई० में बिहार में भी छात्रों ने आन्दोलन शुरू किया। इस समय बिहार की आर्थिक स्थिति अत्यन्त पिछड़ी हुई थी और सरकार भी राजनीतिक रूप से भ्रष्ट थी।[37] 21 जनवरी 1974 ई० को मूल्यवृद्धि पर रोक को लेकर पूरे बिहार में गैर कांग्रेसी पार्टियों द्वारा 'बन्द' का आयोजन किया गया। पटना विश्वविद्यालय छात्र संघ ने प्रदेश के महाविद्यालयों के 300 छात्र नेताओं का सम्मेलन आयोजित किया, जिसकी अध्यक्षता 'लालू प्रसाद यादव' ने की। 18 फरवरी 1974 ई० को 'बिहार छात्र संघर्ष समिति' का गठन किया। वामपंथी छात्रों ने 'बिहार छात्र नवजवान संघर्ष मोर्चे का गठन किया।[38] इन दोनों छात्र संगठनों के नेतृत्व में छात्र आन्दोलन 28 फरवरी 1974 ई० को शुरू हुआ। उस वक्त मन्त्रिमण्डल के त्याग-पत्र की मांग नहीं थी। उनकी मांग थी भ्रष्टाचार दूर करो, महंगाई दूर करो, बेकारी दूर करो, शिक्षा में आमूल परिवर्तन करो आदि।[39] जयप्रकाश नारायण ने 30 मार्च को पटना में बिहार-मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र की मांग की, त्यागपत्र की मांग को स्वीकार न करने पर उन्होंने विद्यार्थियों, शान्ति सैनिकों एवं अन्य नागरिकों के जुलूस का नेतृत्व करने की घोषणा की। इसके बाद का घटना चक्र तीव्र गति से घूमने लगा। केन्द्रिय सरकार का संचार एवं प्रचार के सभी साधनों पर एकाधिकार था और केन्द्र सरकार ने जयप्रकाश पर आरोप लगाया कि वे वैद्य सरकार को गिराकर फासीवाद लाना चाहते है।[40] जयप्रकाश ने 9 अप्रैल पटना में सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि यह एक शान्तिपूर्ण आन्दोलन की शुरूआत है और इसके आगे हमें सत्याग्रही की भूमिका में काम करना होगा। एक सरकार के जाने से और दूसरी सरकार के आने से काम नहीं चलेगा हमें तो व्यवस्था का परिवर्तन करना है। उन्होंने घोषणा की कि "मेरा सारा जीवन देश की सेवा में बिता है और आज तक मैं देश की सेवा करता रहा हूँ।

34. जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004, पृ० 17.
35. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार-यात्रा, भाग-1, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ० 16.
36. अंजनी कुमार जमदग्नि, जयप्रकाश नाराण (राजनैतिक और सामाजिक विचार), पूर्वोक्त, पृ० 26.
37. जयप्रकाश नारायण, बिहार का आन्दोलन (सवाल और उनके जवाब), संघर्ष कार्यालय, कदम कुआँ, पटना, 1975, पृ० 10.
38. बिपनचन्द्र, लोकतन्त्र, आपातकाल और जयप्रकाश नारायण, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2007, पृ० 45.
39. जयप्राकश नारायण, मेरी विचार-यात्रा, भाग-2, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ० 17.
40. अंजनी कुमार जमदग्नि, पूर्वोक्त, पृ० 27.

जब तक भी शरीर में शक्ति है, जब तक गिर नहीं जाऊँगा, सेवा ही करता रहूँगा।" उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि सता की राजनीति से अलग रहूँगा।"[41]

जयप्रकाश नारायण ने 5 जून 1974 ई० को पटना के गांधी मैदान में 'सम्पूर्ण क्रान्ति' का नारा दिया। उन्होंने कहा कि 'यह आन्दोलन छात्र-संघर्ष समिति की मात्र 10-12 मांगों की पूर्ति के लिए नहीं, यह सम्पूर्ण क्रान्ति की शुरूआत है।' उन्होंने कहा कि भारतीय लोकतन्त्र को वास्तविक तथा सुदृढ़ बनाना, शोषण का अन्त करना, नैतिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षणिक क्रान्ति करना, नया बिहार बनाना और नया भारत बनाना है। उन्होंने कहा कि इसमें समाज और व्यक्ति का विकास हो, दोनों ऊँचे उठे, केवल शासन बदले इतना ही नहीं, व्यक्ति और समाज भी बदले। इसलिए मैंने इसे सम्पूर्ण क्रान्ति कहा है। सम्पूर्ण क्रान्ति के लिए संघर्ष जरूरी है।[42] उन्होंने सम्पूर्ण क्रान्ति के लिए हिंसात्मक साधनों की अपेक्षा अहिंसात्मक साधनों पर बल दिया। उनका मत था कि सम्पूर्ण क्रान्ति का अर्थ केवल समाज की बाह्य संरचना में परिवर्तन नहीं बल्कि आन्तरिक परिवर्तन भी शामिल है। वे प्रायः इस बात पर बल देते थे कि सम्पूर्ण क्रान्ति का लक्ष्य तब तक पूर्ण नहीं होगा जब तक इसमें सम्पूर्ण सामाजिक-राजनीतिक परिवर्तन न हो। उन्होंने कहा कि सम्पूर्ण क्रान्ति में व्यक्ति भी बदलेगा तथा व्यवस्था भी बदलेगी। ऐसी व्यवस्था में कोई आगे-पीछे नहीं चलेगा बल्कि सभी कदम मिलाकर साथ-साथ चलेंगे। ऐसी स्थिति में व्यक्ति के हित सम्पूर्ण समाज के हित होंगे।[43] जयप्रकाश नारायण के सम्पूर्ण क्रान्ति के नारे से देश में वातावरण ही बदल गया था। उनकी सम्पूर्ण क्रान्ति से सम्बन्धित पक्ष निम्नलिखित है:

सम्पूर्ण क्रान्ति का सामाजिक पक्ष:

जयप्रकाश की सम्पूर्ण क्रान्ति सम्बन्धी अवधारणों के परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत क्रान्ति का अर्थ आमूल अहिंसक बहुमुखी परिवर्तन से है। उनका मानना था कि समाज में प्रचलित रूढ़िवादी मान्यताएं जो आज भारत के सन्दर्भ में अनुकूल नहीं है, उनके स्थान पर नवीन मान्यताओं को कायम किया जाना चाहिए। इन्हें ही स्थापित करने की प्रक्रिया को सामाजिक क्रान्ति के नाम से जाना जाता है।[44]

सम्पूर्ण क्रान्ति का राजनीतिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण ने सम्पूर्ण क्रान्ति के सन्दर्भ में कहा कि जब मै राजनीति शब्द प्रयोग करता हूँ तो उसका प्रचलित अर्थ-सत्ता की राजनीति से नहीं होता। वह राजनीति, प्रचलित राजनीति से सर्वथा भिन्न होती है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण की बात जहां आती है, वहां राजनीति का स्वरूप पूर्ण रूप से बदल जाता है।[45] उन्होंने सत्ता केन्द्रीयकरण के भय के कारण ही 'ग्राम पंचायत' राज्य की कल्पना की थी। उनके विचारों का वास्तविक लोकतन्त्र चेतना के स्तर से सर्वोदय पर खड़ा दिखाई देता चरण है।[46] उनका मानना था कि लोकतन्त्र की मजबूती

41. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार-यात्रा, भाग-2, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ० 20.
42. जयप्रकाश नारायण, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ० 5.
43. जयप्रकाश नारायण, पूर्वोक्त, पृ० 34.
44. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार-यात्रा भाग-1, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ० 107.
45. जयप्रकाश नारायण, पूर्वोक्त, पृ० 104.
46. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद क्यों और कैसे?, पूर्वोक्त, पृ० 200.

के लिए यह जरूरी है कि हम अपने अधिकारों, कर्त्तव्यों के प्रति सचेत हो जाएं, संगठित हो जाएं। लोकतंत्र से नागरिक जितना अलग और उदासीन रहेगा, उतना ही कमजोर और कुंठित लोकतन्त्र चलेगा, लोकतान्त्रिक मूल्यों की चेतना के बगैर लोकतन्त्र बहुत ही कमजोर हो जायेगा। इसलिए वह लोकनीति में विश्वास रखते थे ताकि लोकतन्त्र की रक्षा की जा सके।[47]

सम्पूर्ण क्रान्ति का आर्थिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण ने भारत में औद्योगिकरण का पक्ष लिया। उनकी औद्योगिकरण नीति मध्यमार्गी की थी। उनका विचार था कि बड़े उद्योग-धन्धों का स्वामित्व केन्द्र तथा राज्य सरकारों के पास हो तथा छोटे उद्योग-धन्धों, जिन्हें वे सहायक मानते थे उनका स्वामित्व समितियों के हाथ में हो। उन्होंने सामाजिक आधिपत्य के सम्बन्ध में कहा, कि "सामाजिक आधिपत्य" का अर्थ है 'सम्पत्ति सबकी' सबका उसमें समान हिस्सा, काम की यात्रा और हैसियत के हिसाब से और अन्त में उसका बंटवारा व्यक्ति की आवश्यकताओं के अनुसार किया जाये। उन्होंने आर्थिक विकेन्द्रीकरण का समर्थन किया।[48]

सम्पूर्ण क्रान्ति का बौद्धिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण का विश्वास था कि सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचों में परिवर्तन तभी सम्भव है जब समुदाय इस प्रकार के परिवर्तन की सार्थकता के प्रति चेतनशील हो और तभी उसमें आत्म-अनुशासन, उत्तरदायित्व का विकास हो सकता है। बौद्धिक क्रान्ति का तात्पर्य शिक्षा द्वारा जनता को जागृत करना, उसे चेतनशील बनाना ताकि वह नये समाज का स्वागत कर सके।[49]

सम्पूर्ण क्रान्ति का नैतिक-आध्यात्मिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण के अनुसार, नैतिक आध्यात्मिक क्रान्ति के माध्यम से हृदय, मन को बदलना है। वे इसके लिए जन-आन्दोलन आवश्यक मानते थे। उनका मानना था कि इसके लिए लम्बे समय तक संघर्ष करना पड़ेगा, जुझूना होगा और साथ-साथ रचनात्मक और सृजनात्मक कार्य करने होंगे।[50]

सम्पूर्ण क्रान्ति का सांस्कृतिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण की सांस्कृतिक क्रान्ति का मुख्य उद्देश्य मनुष्यों के मूल्यों तथा सामान्य व्यवहार में मूल परिवर्तन लाना है। उन्होंने सांस्कृतिक क्रान्ति को नैतिक क्रान्ति की संज्ञा दी।

---

47. जयप्रकाश नारायण, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ॰ 41.
48. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973, पृ॰ 17-18.
49. जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, पूर्वोक्त, पृ॰ 47.
50. जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार यात्रा भाग-2, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010, पृ॰ 113.

LBP PUBLICATION

उनका मत था कि मनुष्यों की आदतों व विचारों को मूल परिवर्तन के बिना एक आदर्श समाज की स्थापना मात्र एक स्वप्न होगा।[51]

सम्पूर्ण क्रान्ति का शैक्षणिक पक्ष:

जयप्रकाश नारायण ने 13 अप्रैल 1977 ई० को राष्ट्र के नाम सन्देश में सम्पूर्ण क्रान्ति के मुख्य आधारों का वर्णन किया और उन्होंने साक्षरता पर बल दिया। उन्होंने शिक्षा की पद्धति एवं ढांचे में परिवर्तन की आवश्यकता पर बल दिया। उनकी शिक्षा प्रणाली का मुख्य उद्देश्य भारत के मानव की प्रत्येक स्तर को एक नई दिशा प्रदान करना है। शिक्षा नीति में मूलभूत परिवर्तन करना ताकि प्रत्येक व्यक्ति जीवन में स्वावलम्बी तथा आत्मनिर्भर बन सके व समाज को एक नई दिशा दे सके।[52]

सम्पूर्ण क्रान्ति के नारे से ही आन्दोलन तेज हो गया और पटना में 7 जून से ही विधानसभा के चारों फाटकों पर धरना शुरू हुआ। धरना देने वाले में मुख्य रूप से छात्र, युवक और सर्वोदय कार्यकर्त्ता थे। जयप्रकाश ने कहा कि "इस संघर्ष का इंजन युवाशक्ति है, जिसमें छात्र-शक्ति निहित है, उनके अतिरिक्त इंजन कोई नहीं हो सकता।" उन्होंने कहा कि "ऐसा लोकतन्त्र नहीं चाहिए जो अपना नैतिक आधार खो चुका हो, उन्हें ऐसी राज्य-व्यवस्था नहीं चाहिए जो जनता का विश्वास खो चुकी हो।"[53] जब 12 जून 1975 ई० को इलाहाबाद हाईकोर्ट का फैसला राजनारायण की चुनाव अपील पर हुआ जो उन्होंने श्रीमती इन्दिरा गांधी के खिलाफ दायर कर रखी थी। इन्दिरा पर चुनावों में सरकारी साधनों तथा झूठ बोलकर गुमराह करने का आरोप था। न्यायमूर्ति जगमहोन ने उनको दोषी पाया और उनको 6 वर्ष के लिए लोकसभा चुनाव के लिए अयोग्य घोषित कर दिया।[54] 25 जून 1975 ई० को विपक्ष की ओर से दिल्ली के रामलीला मैदान में एक सभा की गयी। जयप्रकाश नारायण ने भी सभा में भाग लिया और उन्होंने प्रधानमन्त्री के इस्तीफे के बारे में कहा कि सवाल कानून का नहीं है, वरन् लोकतान्त्रिक मूल्यों का है। उन्होंने कहा कि जिस व्यक्ति पर उच्च न्यायालय ने भ्रष्टाचार और वोट न देने से मना कर दिया हो और जिस पर और भी प्रतिबन्ध लगे हों। वह व्यक्ति फिर भी प्रधानमन्त्री बना रहे, न तो नैतिकता है और न औचित्य है, न ही राजनीतिक शिष्टता है और फिर भी वह प्रधानमन्त्री रहे तो लोकतन्त्र के लिए इससे बढ़कर कोई खतरनाक बात नहीं हो सकती है।[55]

जयप्रकाश नारायण ने अपने भाषणों के माध्यम से देश में ऐसा वातावरण पैदा कर दिया था कि सरकार के लिए काम करना कठिन हो गया था। जिस कारण सरकार ने घबराकर 25 जून 1975 ई० की मध्यरात्रि में प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी की सलाह पर राष्ट्रपति फखरूद्धीन अली अहमद ने उस उद्घोषणा पर हस्ताक्षर कर दिये जो इन्दिरा गांधी तथा सहयोगियों ने तैयार की

---

51. जयप्रकाश नारायण, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002, पृ० 54.
52. आर०सी० गुप्ता, जे०पी० फ्रॉम मार्क्सिज्म टू टोटल रिवोल्युसन, स्टर्लिंग पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1981, पृ० 136.
53. आचार्य राममूर्ति, जे०पी० की विरासत, पूर्वोक्त, पृ० 55.
54. आचार्य राममूर्ति, पूर्वोक्त, पृ० 81.
55. हिन्दुस्तान, 26 जून 1975, नई दिल्ली, (जे०एम०एम०एल०)

थी, जिससे देश में आपातकाल लागू हो गया।[56] पूर्व निर्धारित योजना के तहत 26 जून की सुबह-सुबह अधिकतर उतरी राज्यों में जहां जयप्रकाश नारायण का आन्दोलन मजबूत था। आन्तरिक सुरक्षा कानून के अन्तर्गत विपक्ष के सैंकड़ों प्रमुख नेता गिरफ्तार कर लिए गए। अखबारों पर सख्त सेंसरशिप लगा दी गई। जयप्रकाश को 3 बजे पुलिस द्वारा गांधी शान्ति प्रतिष्ठान (दिल्ली) से गिरफ्तार कर लिया गया।[57] 7 नवम्बर 1975 ई० को सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में श्रीमती इन्दिरा गांधी की चुनाव-प्रणाली को वैद्य ठहराते हुए उनके विरूद्ध इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया। 18 जनवरी 1977 ई० की रात को राष्ट्र के नाम अपने एक अप्रत्याशित सन्देश में प्रधानमन्त्री ने लोकसभा चुनाव कराने की घोषणा की और कहा- "आपात स्थिति में ढील दी जा रही है, ताकि मान्यता राजनीतिक पार्टियां उचित गतिविधियों में हिस्सा ले सके।" जयप्रकाश नारायण ने चुनाव घोषणा का स्वागत किया और गैर-कांग्रेसी दलों को एक मंच पर आने को कहा ताकि चुनाव जीता जा सके।[58]

जयप्रकाश नारायण से प्रेरित और ऐसी स्थिति का सामना करते हुए जिसमें उनके अस्तित्व को खतरा था, विपक्षी नेताओं ने अपने व्यक्तिगत तथा वैचारिक मतभेदों को भुलाते हुए एक नई पार्टी के गठन में कोई समय नहीं गवाया। 20 जनवरी 1977 ई० को जनता पार्टी का गठन किया और मोरारजी देसाई की अध्यक्षता में एक सामान्य चुनाव चिन्ह पर आगामी चुनावों को लड़ने का निश्चय किया। जनता पार्टी तथा उनके सहयोगियों को लोकसभा में स्पष्ट बहुमत मिला और कांग्रेस की बुरी तरह हार हो गई।[59] 24 मार्च 1977 ई० को प्रातः 7 बजे दिल्ली में राजघाट पर महात्मा गांधी की समाधि पर जनता पार्टी के तथा कांग्रेस फॉर डेमोक्रेसी के नवनिर्वाचित सांसदों को जयप्रकाश ने देश की सेवा की सामूहिक प्रतिज्ञा दिलवायी। जनता पार्टी की सरकार में प्रधानमन्त्री की शपथ मोरारजी देसाई ने ली परन्तु कुछ दिनों में प्रधानमन्त्री तथा उनकी सरकार के गृहमन्त्री चरण सिंह में मतभेद हो गया। 11 जुलाई 1979 ई० को चरण सिंह अपने मनसूबे में सफल हो गये और प्रधानमन्त्री बन गये। लेकिन चरण सिंह की राजनीति ज्यादा समय तक नहीं चल सकी क्योंकि इन्दिरा गांधी ने अविश्वास प्रस्ताव के तहत उनकी सरकार गिरा दी और 22 अगस्त 1979 ई० को संसद भंग कर जनवरी 1980 ई० में चुनाव कराने की घोषणा कर दी।[60]

जनता पार्टी के शासन खत्म होने पर जयप्रकाश नारायण एकान्त में जीवन व्यतीत करने लग गये। वे जनता सरकार के पतन के बाद बहुत ही उदास रहने लग गये थे। अतः जयप्रकाश नारायण एक महान विचारक थे और समाजवाद के आधार पर समाज को सम्पन्नता के आधार पर संगठित करना चाहते थे। उनका राजनीतिक दर्शन सर्वोदय के साथ-साथ लोकतान्त्रिक समाजवाद के कतिपय मूलभूत सिद्धान्तों पर आवृत है। वे चाहते थे कि जन-शक्ति सर्वोपरी समझी जाये किन्तु जन-शक्ति और राज्य-शक्ति दोनों मिलकर कार्य करें

---

56. बिपनचन्द्र, लोकतन्त्र आपातकाल और जयप्रकाश नारायण, पूर्वोक्त, पृ० 185.
57. आचार्य राममूर्ति, पूर्वोक्त, पृ० 83.
58. जगदीश चावला, लोकनायक-जयप्रकाश नारायण, प्रेम प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली, 1977, पृ० 83.
59. बिपन चन्द्र, पूर्वोक्त, पृ० 290.
60. जगदीश चावला, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, पूर्वोक्त, पृ० 87

तथा लोकतान्त्रिक समाजवाद और सर्वोदय एक-दूसरे को पुष्ट करें ताकि सही समाज का निर्माण हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

- जयप्रकाश नारायण, समाजवाद से सर्वोदय की ओर, सर्व-सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002
- जयप्रकाश नारायण, समाजवाद, सर्वोदय और लोकतन्त्र, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 1973
- जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार-यात्रा, भाग-1, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन वाराणसी, 2010
- सतीश चतुर्वेदी, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, व्यक्ति और विचार, आविष्कार पब्लिशर्स जयपुर, 2003
- लक्ष्मी नारायण लाल, जयप्रकाश नारायण, मैकमिलन कम्पनी, दिल्ली 1955
- सुधाकर लाल श्रीवास्तव, राष्ट्रीय आन्दोलन और जयप्रकाश नारायण, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1991
- ऐलन एण्ड वैण्डी स्कार्फ, जयप्रकाश : एक जीवनी, राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, 1978, पृ॰ 75-77
- नारायण ऐसाई (सं॰) कान्ति शाह, जयप्रकाश (स्मृति ग्रन्थ), अनुवादक, काशीनाथ त्रिवेदी, जयप्रकाश अमृतकोष, 223 उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली, 1982
- सुनीलम प्रसाद, विनोद (संपादक) : समाजवादी आन्दोलन तनाव का दौर दस्तावेज (1952-54) प्रतिपक्ष प्रकाशन दिल्ली, 1986
- जयप्रकाश नारायण, ग्रामदान और देश की समस्याएं, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 1965
- जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य (विस्तृत अध्ययन), सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004
- जयप्रकाश नारायण, सामुदायिक समाज रूप और चिन्तन, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010
- जयप्रकाश नारायण, टाटेल रिवोल्युसन, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2002
- अंजनी कुमार जमदग्नि, जयप्रकाश नारायण, राजनैतिक और सामाजिक विचार, प्रिन्टवैल पब्लिशर्स, जयपुर, 198
- आचार्य राममूर्ति, जे॰ पी॰ की विरासत, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010
- ओम प्रकाश शर्मा, सर्वोदय और जयप्रकाश नारायण, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1992
- जयप्रकाश नारायण, लोक स्वराज्य, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2004
- जयप्रकाश नारायण, भारतीय राज्य-व्यवस्था की पुर्नरचना एक सुझाव, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, वाराणसी, 2010
- यशवन्त सिन्हा (सम्पादक), स्वराज से लोकनायक, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2005

LBP PUBLICATION

- जयप्रकाश नारायण, सामुदायिक समाज रूप और चिन्तन, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2010
- जयप्रकाश नारायण, बिहार का आन्दोलन (सवाल और उनके जवाब), संघर्ष कार्यालय, कदम कुआँ, पटना, 1975
- बिपनचन्द्र, लोकतन्त्र, आपातकाल और जयप्रकाश नारायण, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2007
- जयप्रकाश नारायण, सम्पूर्ण क्रान्ति, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी, 2002
- जयप्रकाश नारायण, मेरी विचार यात्रा भाग–2, सर्व सेवा संघ–प्रकाशन, वाराणसी, 2010
- आर०सी० गुप्ता, जे०पी० फ्रॉम मार्क्सिज्म टू टोटल रिवोल्युसन, स्टर्लिंग पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1981
- हिन्दुस्तान, 26 जून 1975, नई दिल्ली, (जे०एम०एम०एल०)
- जगदीश चावला, लोकनायक–जयप्रकाश नारायण, प्रेम प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली, 1977

LBP PUBLICATION